International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2016; Page No. 47-48

नारी सशक्तिकरण एवं स्त्री मुक्ति का संघर्ष

डॉ0 प्रीती सिंह

पी0डी0एफ0, हिन्दी, लखनऊ विष्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

''नारी सशक्तिकरण के नारों से, गूँज उठी है वसुंधरा,
संगोष्ठी, परिचर्चाएं सुन–सुन, अंतर्मन ये पूछ पड़ा।
शक्ति को ना ललकारों, इसको नारी ही रहने दो,
करूणा, ममता की सरिता ये, कल–कल शीतल ही बहने दो।।

महिला सशक्तिकरण की बात समाज में रह–रहकर उठती रही है। महिला सशक्तिकरण का अर्थ कुछ इस प्रकार लगाया जाता है कि जैसे महिलाओं को किसी वर्ग विशेषकर पुरूष वर्ग का सामना करने के लिए सुदृढ़ किया जा रहा है। वैसे 'सशक्तिकरण ' से तात्पर्य किसी व्यक्ति की उस क्षमता से है जिससे उसमें ये योग्यता आ जाती है, जिसमें वो अपने जीवन से जुड़े सभी निर्णय स्वयं ले सके। महिला सशक्तिकरण में भी हम उसी क्षमता की बात कर रहे हैं, जहाँ महिलाएँ परिवार और समाज के सभी बंधनों से मुक्त होकर अपने निर्णयों की निर्माता खुद हो।

अपनी निजी स्वतंत्रता और स्वयं के फैसले लेने के लिए महिलाओं को अधिकार देना ही नारी सशक्तिकरण है। परिवार और समाज की हदों को पीछे छोड़ने के द्वारा फैसले, अधिकार, विचार, दिमाग आदि सभी पहलुओं से महिलाओं को अधिकार देना, उन्हें स्वतंत्र बनाने के लिए है। समाज में सभी क्षेत्रों में पुरूष और महिला दोनों को बराबरी में लाना होगा। देश, समाज और परिवार के उज्जवल भविष्य के लिए महिला सशक्तिकरण बेहद जरूरी है।

नारी सशक्तिकरण के नारे के साथ एक प्रश्न उठता है कि ''क्या महिलाएँ सचमुच में मजबूत बनी हैं'' और ''क्या उनका लम्बे समय का संघर्ष खत्म हो चुका है।''

वर्तमान समय विमर्शों का समय है। आज स्त्री–विमर्श बहु आयामी है, किन्तु उसके तीन प्रमुख बिन्दु हैं – यातना, संघर्ष, स्वप्न। बाकी समस्त मुद्दे इन्हीं के साथ जुड़े हुए हैं। नैतिकता और मर्यादा का प्रश्न आज बहुत पीछे छूट गया है।

सुधीर प्रचौरी ''स्त्री विमर्श'' के विषय में लिखते हैंः– ''भारत में स्त्री और उसके स्त्रीत्व की पहचान और उसके अधिकारों के संघर्ष एवं आन्दोलनों को अब पच्चीस साल से ज्यादा होने को आए हैं। लिंगाधारित अन्याय से लड़ने की इच्छा समाज में बढ़ी है। अनेक संगठन स्त्री मुक्ति के बुनियादी एवं व्यापक प्रश्नों से जूझ रहे हैं। विश्व भर के स्त्री आन्दोलनों और स्त्रीत्ववादी लेखन की जानकारी बढ़ने लगी है। पश्चिम में स्त्रीत्ववादी चेतना और लेखन का इतिहास एक सदी पुराना हो चला है। महिला आयोग बन चले हैं, स्त्री के अधिकारों के पक्ष में अनेक व्यवस्थाएँ आई हैं। कई अखबार तक सप्ताह में एक पृष्ठ स्त्री हित विषयक सामग्री देते हैं। कई पत्रिकाएँ अपने विशेष अंक में इसी विषय को केन्द्रित करके निकाल चुकी हैं। स्त्रीत्व विषयक विमर्श की किताबें हिन्दी में अच्छा बाजार पाने लगी हैं।''[1]

आज स्त्री ने पुराने ढ़ाँचे को बदल कर रख दिया है। स्त्री आखिर कब तक हाथ रखे पुरूषों की ओर मूक पशु की भाँति ताकती रहेगी? कब वह अपने अस्मिता की मशाल स्वयं जलायेगी? उसे कब तक पुरूष रूपी वैशाखियों का सहारा लेना पड़ेगा? ऐसे अनेक प्रश्न आज हर स्त्री के जहन में कुलबुलाने लगे हैं।

लता शर्मा अपनी पुस्तक ''औरत अपने लिए'' में लिखती हैं – ''स्त्री को अपनी सुरक्षा की समस्या स्वयं ही करना होगा।'' जब तक आप चित्त न हो कोई रौंद नहीं सकता। सारी जद्दोजहद यही है। लोग आपको 'चित्त' करने के नित नये उपाय खोज रहे हैं। आवश्यकता है कि आप इन दायित्वों को, जो अपना रास्ता स्वयं तलाशता–तराशता है, उसे सही रास्ते की पहचान होती है। उंगली पकड़ कर चलाने वाले कभी कहीं नहीं पहुँचते। इसलिए संघर्ष ही पहला और अंतिम उपाय है। संघर्ष अपनी इयता के लिए, संघर्ष अपनी अस्मिता के लिए, संघर्ष व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए इस कठिन मार्ग पर किसी छाया, संरक्षण और सुविधा को स्वीकार मत कीजिए। सुविधा के लिए समझौता परतंत्रता की ओर पहला कदम है, संरक्षण आत्मनिर्णय का अधिकार छीन लेता है। आत्मसम्मान के मूल्य पर हर सुख स्वतंत्रता का क्षरण है।''[2]

स्त्री के सामने सबसे बड़ी समस्या है कि वह न घर में सुरक्षित है न बाहर, आखिर जाये तो जाये कहाँ? दुर्व्यवहार, बलात्कार जैसी समस्याएँ दिन रात चौगुनी के रूप में फल–फूल रही हैं, और हम हैं जो स्त्री विमर्श की बातें ताल ठोंक–ठोंक कर रहे हैं, पर पुरूषों ने जैसे अपने कानों में रूई डाल रखी हो, और आँखों में धृतराष्ट्रनुमा पट्टी बाँधकर बैठा है। वह न सुन सकता है, न देख सकता है। वह समाज में अपना एकछत्र राज्य मानता है, जो उसे जन्म जन्मांतर से दैवीय वरदान के रूप में प्राप्त हुआ है, जिसमें सिर्फ और सिर्फ हमारा अधिकार है, और रहेगा।

'जॉन स्टुअर्ट मिल' 'स्त्री प्रश्न' को परिभाषित करते हुए लिखते हैं– ''सीधे–सरल शब्दों में स्त्री प्रश्न को यदि परिभाषित करना हो तो कहा जा सकता है कि परिवार, मातृत्व और शिशुपालन सहित समस्त सामाजिक गतिविधियों एवं संस्थाओं में स्त्रियों की भूमिका, अन्य सामाजिक–आर्थिक शोषण– उत्पीड़न के साथ ही यौन–भेद पर आधारित स्त्री उत्पीड़न की विषिष्टता और स्त्री–मुक्ति से जुड़ी सभी समस्याओं का जटिल समुच्चय है – स्त्री प्रश्न।''[3]

नारी प्रकृति की अद्भुत रचना है। वह मानव जीवन की जन्मदात्री है। सृष्टि के विकास में स्त्री का अभूतपूर्व योगदान रहा है। वह सृष्टि की प्रणेता है, परन्तु पितृसत्तात्मक समाज ने उसे सम्मान न देकर दोयम दर्ज का घोषित कर उसमें हीन भावना उत्पन्न कर दी। हमारी संस्कृति को जीवित रखने का श्रेय स्त्री जाति को रहा है और वह सदैव रहेगा भी। स्त्री के पास इतनी जीवन शक्ति भरी हुई है कि वह संसार को निरन्तर चिर नवीन बनाये रखती है। इन सबके बावजूद भी स्त्री–संघर्ष गाथा और उसकी जीवन शक्ति को पकड़ने की कोशिश करता कोई नहीं दिखता।

मंगतेश डबरात की एक प्रसिद्ध कविता 'स्त्रियाँ' ऐसी ही बेजोड़ कविता हैं, जिसमें स्त्री का दुःख, उसका संघर्ष, उसका प्रेम और अंततः उसका त्याग, जो आत्मदान की हद तक व्यंजित होता है, प्रकट हुआ है। यह कविता बताती है कि बार–बार छली जाने के बावजूद स्त्री अंततः प्रेम से बसा हुआ एक घर चाहती हैः–

''एक आँख से हँसती, एक से रोती हुई
वह फिर से आ पहुँचती है पुरूष के सामने
जैसे उसका कुछ न छीना गया हो

जैसे वह उसी तरह करती आ रही हो प्रेम।''[4]

स्त्री–मुक्ति, स्त्री–चेतना और स्त्री सामर्थ्य ने आज समूचे विश्व को झुनझुने सा बजा दिया है। स्त्री की व्यवस्था को यदि हम वृहत्तर अर्थों में परिभाषित करना चाहें तो वह घर–परिवार, समाज–नीति और राष्ट्रनीति में नारी की अस्मिता, अधिकार और उन अधिकारों के लिए संघर्ष चेतना से जुड़े संवाद की संकल्पना है। वहाँ सामाजिक–धार्मिक अंधरूढ़ियों में दबी–पिसी स्त्री की कराहें, आहें ही नहीं, बल्कि शोषक व्यवस्था के विरूद्ध उसका आक्रोश–विद्रोह भी है, साथ ही स्त्री की गरिमापूर्ण सशक्त छवि गढ़ने की मुहिम भी।

स्त्री का जीवन ही नहीं, उसकी कलम भावनाएँ कल्पनाएँ, अनुभव, आकांक्षाएँ जंजीरों में जकड़ी हुई हैं। आज भी समाज को पितृसत्तात्मक नैतिक मूल्यों से बँधी हुई शालीन, पतिव्रता, समर्पणशील, कर्तव्यनिष्ठ, आज्ञाकारी स्त्रियाँ ही आदर्श की प्रतीक नज़र आती हैं। विद्रोही स्त्रियों से तो उन्हें डर ही लगता है, क्योंकि उनकी कलम उनके घिनौने अमानवीय चेहरों को बेनकाब करती है। उनमें जागरूकता का अहसास होता है। केवल वह स्त्री लेखिका–पाठिका स्त्री अस्तित्व की स्वतंत्रता, अस्मिता के लिए संघर्ष कर सकती है, जिसमें अपने समाज की प्रधान प्रभुत्वशाली वर्चस्वी संस्कृति के अंतर्विरोधों का ज्ञान हो तथा स्त्री की पराधीनता और मुक्ति के लिए संघर्ष की आकांक्षा भी हो।

''मिल जानी चाहिए अब मुक्ति स्त्रियों को
आखिर कब तक विमर्श में रहेगी मुक्ति
बननी चाहिए एक सड़क, चलें जिस पर सिर्फ स्त्रियाँ ही
मेले और हाट बाजार भी अलग
किताबें अलग–अलग हों गाथाएँ इतिहास''[5]

स्त्री मुक्ति के इस विराट स्वप्न को पूरा करने के लिए परिदृश्य में उतर कर आई है कुछ जाँबाज स्त्रियाँ, जिन्होंने समाज के दबी, कुचली, असंवेदनशील मान्यताओं को चकनाचूर कर एक नवीन मान्यता का शिलान्यास किया है।

स्त्री मुक्ति की आकांक्षा प्रत्येक स्त्री में समान होती है, इसलिए इसे धर्म या जातिवादी आधार पर विभाजित करके नहीं देखा जाना चाहिए। बात जब 'स्त्री मुक्ति' की हो तो वह किसी विशेष दायरे में सीमित नहीं रह जाती।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. स्त्री मुक्ति का सपना– सं0 प्रो0 कमला प्रसाद, राजेन्द्र प्रसाद, पृ0सं0–446
2. औरत अपने लिए – लता शर्मा – पृ0सं0–126
3. स्त्रियों की पराधीनता – जॉन स्टुअर्ट मिल – पृ0सं0–10
4. स्त्रियां –मंगलेश डबराल – पृ0सं0–18
5. भारत में स्त्री असमानता : एक विमर्श – डॉ0 गोपा जोशी, पृ0सं0–263